संपादकीय :

भारत में सबसे बड़े निजी क्षेत्र का कारोबार कृषि है और कृषि अब लाभकारी न होकर केवल जोखिम भरा रह गया है। खेतों में काम करने वाला एक किसान औसतन रू. 3,000/– मासिक कमाता है। किसानों को लगातार मौसम की मार का सामना करना पडता है और कृषि फसलों के मूल्य में उतार–चढ़ाव होते रहने से किसान तब तक परेशान रहता है जब तक कि वह बीमार न पड़ जाऐ या दम न तोड दे। भारत के इतिहास में पहली बार देखने में आ रहा है कि युवा किसान भी निराश हैं और आत्महत्याऐं कर रहे हैं। किसानों को खेती मजबूरी में करनी पड़ती है क्योंकि अन्य कोई वैकल्पिक कारोबार नहीं है। इसके परिणामस्वरूप न तो किसान न उनके बच्चे और न ही युवा खेती करने के इच्छुक हैं। अब तो लोग अपनी लड़कियों की शादी किसान परिवार से भी नहीं करना चाहते। इसका कारण जानना मुश्किल नहीं, क्योंकि अधिकतम किसान अपनी अभिलाषा यही रखते हैं कि उनके बच्चों को कोई भी सरकारी नौकरी मिल जाऐ। कुछ महीने पहले ही उत्तर–प्रदेश में 368 चपरासी के पदों के लिऐ 23 लाख युवकों ने आवेदन किया था। कृषि के प्रति निराशा और घृणा इस संख्या को देखकर महसूस की जा सकती है। यह सब तो तब था जब 7वें वेतन आयोग की सिफारिशें घोषित नहीं हुई थी।

समाचारों में बताया गया है कि 1 लाख वेतनभोगी कर्मचारी और पेंशन लेने वालों को उन्हें अतिरिक्त लाभ के रूप में 1 वर्ष में 1 लाख करोड़ रूपये से अधिक मिलेंगे, यह सब अभी उनको मिलने वाले वेतन या पेंशन के अतिरिक्त होगा और इसका औसत प्रति व्यक्ति, प्रति वर्ष लगभग 1 लाख रूपऐ बनता है। हमारे जैसे किसान जो खेतों में सुबह से शाम तक पसीना बहाते हैं, हैरान हैं कि पहले से ही धन कुबेर लोगों पर इतनी उदारता किस लिऐ है। यदि सभी राज्य सरकारों को ये सिफारिशें लागू करनी पड़ी तो देश पर कुल अतिरिक्त व्यय का बोझ लगभग 3 लाख करोड़ रूपऐ पड़ेगा। आशंका है कि भारत की स्थिति भी ग्रीस देश की तरह न हो जाऐ।

यदि वेतन आयोग कि सिफारिशें मान ली गई तो जिस अध्यापक को वर्ष 1980 में रू. 850/– मासिक वेतन मिलता था, उसे वर्ष 2016 में रू. 96,700/– मिलेंगे अर्थात 35 वर्षों में 113 गुणा अधिक। इसके अतिरिक्त, सेवानिवृत होने पर मासिक पेंशन के रूप में रू. 46,000/– मिलेंगे। इसी प्रकार ग्रामीण सहकारी बैंक, जहां मेरा बैंक खाता है, के कर्मचारी को वर्ष 1976 में रू. 720/– मासिक वेतन मिलता था, और वह शीघ्र सेवानिवृत हो जाऐगा, उसे अंतिम वेतन के रूप में रू. 1,30,000/– मासिक वेतन मिलेगा अर्थात् 40 वर्षों में 180 गुणा की वृद्धि। संपूर्ण विश्व में ऐसा ईनाम कहां मिलेगा। इस प्रकार की सूची वास्तव में समाप्त होने वाली नहीं है।

1970 के दशक के शुरूआती वर्षों में कार्यभार ग्रहन करने वाले और अब शीघ्र सेवानिवृत हो रहे लैफटिनेंट जनरल को रू. 450/– का मासिक वेतन मिलता था, आज उस पद के लिऐ रू. 1,75,000/– मिलेंगे और सेवानिवृत होने पर रू. 85,000/– की पेंशन भी मिलेगी। देश में इस प्रकार की घटनाऐं आम हैं, क्योंकि लाखों ग्रामीण किशोर देश भर में भर्ती केंद्रों पर लाईनों में लगते हैं और बहुत बार लाठियां भी खाते हैं क्योंकि भीड़ को नियंत्रण करने के लिऐ लाठीचार्ज करना पड़ता है। 'समान पद समान पेंशन' के मुद्दे का समाधान अभी तक नहीं हुआ है। इसके अतिरिक्त ट्रेड यूनियनस और आई.ऐ.एस. लॉबी में अभी भी सिफारिशों के प्रति असंतोष है, जबकि केंद्रीय सरकार न्यूनतम वेतन को रू. 7,000/– से बढ़ाकर रू. 18,000/– कर रही है और यह वृद्धि 260 प्रतिशत बनती है। एक किसान के लिऐ ऐसा सपने में सोचना भी उचित नहीं है क्योंकि यदि एक औसत वर्ग का मझौला किसान अपनी प्रति एकड़ भूमि से रू. 1,40,000/– कमाऐ तो ही न्यूनतम मूल वेतन जितना कमा पाऐगा और अभी इसमें नौकरी के दौरान मिलने वाले अन्य लाभ शामिल नहीं हैं।

अब भी यदि आप को हैरानी हो रही है कि सरकारी नौकरी के पीछे इतनी उत्सुकता क्यों, तो मुझे आश्चर्य होगा। नौकरी के लिऐ आवेदन करने वालों के मां–बाप सरकारी नौकरी दिलाने के लिऐ राजनेताओं को घूस देते हैं और मानते हैं कि रिश्वत तो एक निवेश है, जिसकी भरपाई कर्मचारी की नौकरी करके भ्रष्टाचार अपनाकर कर ली जाऐगी और भविष्य भी सुरक्षित रहेगा। समय इतना बदल चुका है कि भ्रष्टाचार के प्रति रोष प्रकट करने के स्थान पर लोग अपने आप को भाग्यशाली समझते हैं कि उनकी पहुंच ऐसे नेता तक है जिसे वह रिश्वत देकर नौकरी मिलने की गारंटी ले लेंगे। नेताओं को भी इस अवसर का लाभ उठाने में कोई संकोच नहीं। पंजाब सरकार की वित्तीय स्थिति लड़खड़ा चुकी है और पिछले कई वर्षों से किसान खेती से निराश हो रहे हैं, इसे देखते हुऐ पंजाब सरकार ने राज्य के किसानों के रोष और निराशा व सरकार के प्रति घृणा को कम करने और उनका मुंह बंद करने के लिऐ 1,13,000 नई नौकरियों की घोषणा की है।

वेतन आयोग की सिफारिशों से देश के 1 प्रतिशत लोगों को नकद खैरात बांटकर सरकार द्वारा इस निराशा और रोष को और उत्तेजित करना एक मूर्खतापूर्ण कदम है। 1 लाख करोड़ रूपऐ से बहुत कुछ प्राप्त किया जा सकता है। उर्वरक सब्सिडी के रूप में रू. 65,000/– करोड़ की रोजाना आलोचना होती है, जबकि उस राशि की तुलना में यह कुछ भी नहीं है। किसान बार–बार एक मुश्त रू. 55,000/– करोड़ के ऋण को माफ करने के लिऐ कह चुके हैं। उक्त राशि से विकल्प के रूप में 375 करोड़ व्यक्तियों के लिऐ प्रत्येक वर्ष मनरेगा के अंतर्गत कई दिनों का वेतन मिल सकता है। किसी भी सरकार के लिऐ यह कठिन मान लिया जाता है कि वह कृषि क्षेत्र को अधिक साधन उपलब्ध कराऐ, क्योंकि हर किसी की मांगें बढ़ती जा रही हैं। किंतु यदि सत्ता में कार्य करने वाले लोग गांव छोड़ रहे किसानों के बारे में सोचें और उस कारण होने वाले परिणामों का सामना करने के बारे में सोचें तो उन्हें महसूस होगा कि किसानों को कृषि क्षेत्र में प्रसन्न रखना अधिक सस्ता है न कि उनका गांव से प्रस्थान करने पर उत्पन्न अन्य समस्याओं का समाधान। वेतन वृद्धि पर 10 वर्ष तक रोक लगाना एक बेहतर रणनीति है। इस कारण वेतनमानों में संशोधन करना पडता है, किंतु राजस्व व्यय इस प्रकार से किया जाना चाहिऐ, जिससे समाज में समानता आ सके।

किसानों को अपने लड़कों के लिऐ दुल्हन लाने के लिऐ निर्वाह भत्ता देना पड़ता है, जबकि दूसरी और उन्हें अपनी लड़की की शादी करने के लिऐ जमीन बेचनी पड़ती है ताकि अधिक से अधिक दहेज देकर वे अपनी लड़कियों की शादी किसी ऐसे व्यक्ति से करें जो सुरक्षित सरकारी नौकरी में लगा हो। सामाजिक–आर्थिक पायदान के सबसे नीचे होना वास्तव में बहुत डरावना होता है। समान वृद्धि कोई बहुत बड़ा स्वपन नहीं है, लेकिन समाज में असमानता बढ़ना एक दुःस्वपन अवश्य है, जिससे वेतनभोगी वर्ग तो समृद्ध हो रहा है लेकिन इस बवंडर से देश को बड़ी हानि हो सकती है।

डॉ० पंजाबराव देशमुख जी की 117वीं जयंती पर भारत कृषक समाज की श्रद्धांजलि

इस वर्ष हम 27 दिसंबर, 2015 को डॉ० पंजाबराव देशमुख जी की 117वीं जयंती मना रहे हैं। वे भारत कृषक समाज के संस्थापक अध्यक्ष थे। इस दिन पूरे देश में हम और भारत कृषक समाज की सभी शाखाऐं उनके कार्यों और उनके विचारों को स्मरण करने के लिऐ बैठकें और गोष्ठियां, वार्तालाप और कार्यक्रमों का आयोजन करते हैं। डॉ० देशमुख ने भारत कृषक समाज के बीज बोऐ थे और अपनी कड़ी मेहनत और ईमानदारी से कार्य करके इसे सशक्त बनाया। इस दिन हम उन्हें देश के शोषित किसानों के एक अगुवा और मजबूत नेता के रूप में याद करते हैं। डॉ० देशमुख जिन आदर्शों और लक्ष्यों की प्राप्ति के लिऐ अपना पूरा जीवन लड़े वे अभी भी पूरे नहीं हुऐ और न ही उनकी प्राप्ति हो पाई। यह युद्ध अभी चल रहा है। हम आज भी शोषित, पिछड़े और गरीब किसानों तथा खेतीहर मजदूरों के कल्याण और उन्नति के लिऐ संधर्ष कर रहे हैं और सभी जोखिमों और कठिनाईयों का सामना कर रहे हैं। हम उन लक्ष्यों की ओर बढ़ रहे हैं जिनके लिऐ हमारे नेता डॉ० पंजाबराव देशमुख ने संधर्ष किया था।

डॉ० देशमुख गांधी जी, नेहरू जी और डॉ० राजेन्द्र प्रसाद तथा अन्य निःस्वार्थ राष्ट्रीय नेताओं के समय के प्रसिद्ध व्यक्ति थे और उन्होंने इन नेताओं के बताऐ हुऐ मार्ग को ईमानदारी से अपनाया और इसका परिणाम भी आया तथा भारत की सबसे पहली और बड़ी किसानों की संस्था 'भारत कृषक समाज' की स्थापना की। आज भारत कृषक समाज के 1 लाख से भी अधिक सदस्य हैं। जब डॉ० देशमुख ने किसानों के कल्याण के लिऐ शुरूआत की थी उस समय किसानों की स्थिति निराशाजनक और बद्तर थी। उन्होंने इस चुनौती को सविकार किया और किसानों को भारत कृषक समाज के बैनर के तले संगठित किया। वे स्वंय एक किसान थे और उन्होंने अंग्रेजों के समय के अत्याचार और निर्धनता देखी थी, जब किसानों के पास पहनने को कपड़े नहीं और खाने को अनाज भी नहीं था। इस दिशा में उन्होंने सबसे पहले किसानों की नई पीढ़ी को शिक्षित करना उचित समझा ताकि वह अपने पैरों पर खड़े हो सकें। उन्होंने इंग्लैंड से शिक्षा ग्रहण की और कानून की पढ़ाई करने के बाद लोगों की सेवा में जुट गऐ। महाराष्ट्र में अमरावती के एक छोटे से गांव में पैदा हुऐ वे देश के केंद्रीय कृषि मंत्री के पद तक पहुंचे।

हमें उनकी 117वीं जयंती के मंगल दिवस पर यह प्रतिज्ञा करनी चाहिऐ कि हम उनके आदर्शों और उनके अधूरे कार्यों को पूरा करेंगे तथा इसके लिऐ संघर्षरत रहेंगे।

सारा ऋण कहां चला गया ?

प्रोफेसर आर. रामकुमार, प्रोफेसर एंड डीन ऑफ डैवलपमेंट स्टडीज, टाटा इन्स्टीटयूट ऑफ सोशल साईंसिस

आज भारतीय कृषि में सबसे गंभीर समस्या किसानों के ऋणी होने की है। औसतन एक ग्रामीण या किसान परिवार वर्ष 1992 अर्थात् 20 वर्ष पहले की तुलना में वर्ष 2013 में अधिक ऋणी हो चुका है। अखिल भारतीय ऋण एवम् निवेश सर्वेक्षण में दर्शाया गया है कि ग्रामीण परिवार का ऋण 1992 में 23 प्रतिशत से वर्ष 2013 में बढ़कर 31 प्रतिशत हो चुका है। किसान परिवार के ऋण का भाग 25.9 प्रतिशत से बढ़कर 45 प्रतिशत हो गया है। यह बहुत बड़ी वृद्धि है।

अर्थशास्त्री जानते हैं कि यह जरूरी नहीं कि ऋणी होना गलत या बुरी बात है बल्कि यह अच्छा भी हो सकता है, लेकिन यह ऋण लेने की शर्तों पर और ऋण चुकाने के बोझ पर निर्भर करता है। इस अवधि के दौरान परिवारों द्वारा ऋण लेने के भाग में वृद्धि होने सहित ऋण – परिसंपत्ति अनुपात में तेजी से वृद्धि हुई है। 1992 में ग्रामीण परिवारों की ऋण परिसंपत्ति का अनुपात लगभग 1.8 प्रतिशत था और यह वर्ष 2013 में बढ़कर 3.2 हो गया है। किसान परिवारों में भी इसी प्रकार की वृद्धि देखने में आई है यथा 1.6 से 2.5 प्रतिशत। इस प्रकार परिवारों के ऋणी होने का अधिक भाग है और ऋण के बोझ की तीव्रता ने स्थिति बद्तर कर दी है, इस अनुपात में ऋण चुकाने के लिऐ परिसंपत्तियों की बिक्री बढ़ती जा रही है।

इस स्थिति में यह प्रश्न उठता है कि किसान ऋण कहां से लें और ऋण चुकाने की क्या शर्तें होनी चाहिऐं ? वर्ष 1992 और 2013 के बीच भारत में ग्रामीण ऋण बाजार की एक महत्वपूर्ण विशेषता, आंतरिक विभिन्नता, अस्थाई विभिन्नता सहित, इन पिछले 20 वर्षों में यह सामने आई है कि औपचारिक ऋण के बकाया ऋण का भाग कम हुआ है और अनौपचारिक ऋण संसाधनों का भाग बढ़ा है। 1992 और 2002 के बीच औपचारिक ऋण में तेजी से आई गिरावट में वर्ष 2002 और 2013 के बीच मामूली सी वृद्धि हुई थी लेकिन वह इतनी नहीं थी, कि वर्ष 1992 के स्तर तक पहुंच पाती।

वर्ष 1992 में ग्रामीण परिवारों के बकाया ऋण का 32.7 प्रतिशत भाग अनौपचारिक क्षेत्र से आया था, वर्ष 2013 में यह भाग 44 प्रतिशत था। भारतीय ग्रामीण परिवारों के बकाया ऋण का भाग केवल साहूकारों से ली गई राशि, जो 1992 में 17.5 प्रतिशत थी वह 2013 में बढ़कर 33 प्रतिशत तक पहुंच गई। यह ऋण की लागत में अत्यधिक वृद्धि है और यह दर्शाता है कि औपचारिक सैक्टर भारत के किसानों को ऋण उपलब्ध कराने में असमर्थ रहा।

किसान परिवार भी इसी स्थिति को दर्शाते हैं। अनौपचारिक क्षेत्र से मिलने वाला उनके बकाया ऋण का भाग भी 30 प्रतिशत से बढ़कर 36 प्रतिशत हो गया। केवल साहूकारों से लिऐ गऐ ऋण का प्रतिशत 17.5 से बढ़कर 30 प्रतिशत हो गया। आंकड़े दर्शाते हैं कि साधारण बयाज से चक्रवर्ती ब्याज की गति बढ़ी है। इस प्रकार किसान परिवार द्वारा चुकाई गई औसत ब्याज की दर में भी वृद्धि हुई।

इसका एक प्रमुख कारण यह रहा कि वाणिज्यिक बैंकों से मिलने वाले ऋण में तीव्र कमी रही। वर्ष 1992 से 2013 तक ग्रामीण परिवारों का वाणिज्यिक बैंकों से बकाया ऋण का भाग 33 प्रतिशत से कम होकर 25 प्रतिशत रह गया और किसान परिवारों के लिऐ 30 प्रतिशत।

भारतीय रिजर्व बैंक के आंकड़ें अलग तस्वीर प्रस्तुत करते हैं और इसका खंडन करना महत्वपूर्ण है। वाणिज्यिक बैंकों की ग्रामीण शाखाओं की संख्या 1992 और 1994 में बढ़ी थी, इसके पश्चात वर्ष 1995 और 2005 के बीच इनमें कमी आई और 2006 के बाद वृद्धि हुई। वर्ष 1992 और 2005 के बीच 922 शाखाऐं कम होने के पश्चात 2006 और 2012 के बीच कम समय में ही ग्रामीण शाखाओं की संख्या बढ़कर 5660 हो गई, हाल ही के वर्षों में यह ग्रामीण बैंकों की सबसे तेज वृद्धि दर रही यथाः 30,000 से 35,000। कागजों पर यह उल्लेखनीय वृद्धि है। कृषि ऋण वर्ष 2004 में रू. 96,000/– करोड़ था जो वर्ष 2011 में रू. 4.6/– लाख करोड़ और 2013 में रू. 6.7 लाख करोड़ हो गया, इस प्रकार इस अवधि में वृद्धि संबंधी आपूर्ति रू. 5.7/– लाख करोड़ की हुई। किंतु सारा ऋण गया कहां ?

इस कुल ऋण में से वास्तव में कृषि ऋण कितना है ? वास्तव में कृषि ऋण का कितना विस्तार हुआ ? मुख्य प्रश्न प्रत्यक्ष के भाग का है, जो प्रत्यक्ष रूप से किसानों को जाना चाहिऐ था। वर्ष 1990 में शैडयूल्ड वाणिज्यिक बैंकों के लिऐ प्रत्यक्ष कृषि अग्रिम में रू. 2 लाख तक की राशि का भाग 92 प्रतिशत था और यह वर्ष 2013 में गिरकर 48 प्रतिशत रह गया। अन्य शब्दों में, वर्ष 2013 में रू. 6.7 लाख करोड़ के कुल ऋण में से केवल 48 प्रतिशत अथवा केवल रू. 302 लाख करोड़ ही किसानों को मिल सके। शेष रू. 3.5 लाख करोड़ कहीं और चला गया।

इस दुविधाजनक स्थिति में प्रश्न उठता है कि बैंक शाखाओं का ऋण और उनकी संख्या बढ़ने के बाद भी औपचारिक ऋण की मात्रा 1992 के स्तर से कैसे कम है ? इसका उत्तर यह है कि कृषि ऋण का उल्लेखनीय शहरीकरण किया गया है। भारत में कृषि क्षेत्र को दिऐ गऐ ऋण का चौथे भाग से अधिक भारत के शहरी और महानगरों के बैंकों को दिया गया। इसके अतिरिक्त, प्रत्यक्ष निवेश का 22 प्रतिशत भाग शहरी और महानगरों के बैंकों की शाखाओं को दिया गया जो कि वास्तव में किसानों को दिया जाना था। पश्चिम बंगाल में शहरी और महानगरों की शाखाओं के माध्यम से 55 प्रतिशत प्रत्यक्ष वित्त जाता है। महाराष्ट्र और तमिलनाडु में कुल ऋण का लगभग 32 और 33 प्रतिशत ऐसे ही जाता है। कृषि ऋण का शहरीकरण करने में यह तीनों राज्य सबसे ऊपर हैं। आंकड़े स्वंय बोल रहे हैं कि ऋण किसानों तक पहुंच ही नहीं पाता।

इसक प्रभाव सुस्पष्ट है। कृषि में लघुकालिक ऋण बढ़ रहा है और दीर्घकालीक ऋण कम हो रहा है, यह बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है यदि इसे कृषि क्षेत्र में निवेश के साथ मिला दिया जाऐ। इस प्रकार भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा उठाऐ गऐ कदम असंगति को दूर करने में अपर्याप्त रहे। संपूर्ण भारतीय ग्रामीण क्षेत्र में कृषि संकट को इस तीव्र ऋणी होने की स्थिति के साथ जोड़ा जा सकता है। किसानों द्वारा आत्महत्याऐं करना इसी ऋण बोझ का ही परिणाम है। भारतीय रिजर्व बैंक को इस असंगति को तत्काल दूर करने की आवश्यकता है।

बड़े–बड़े घरानों को दिऐ गऐ ऋण को क्या कृषि ऋण न माना जाऐ ? प्रत्यक्ष वित्त या अप्रत्यक्ष वित्त की परिभाषाओं में परिवर्तन करने से यह पता चलता है कि भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा जारी बड़े–बड़े परिपत्रों के कारण, पूंजी प्रबलता से संबंधित ऋण, एक ही क्षेत्र में निवेश के अंतर्गत कृषि क्षेत्र में नई वस्तुओं को लाना, जहां तक कि प्रत्यक्ष ऋण को भी शामिल किया गया है। उदाहरण के लिऐ वर्ष 2007 से 2013 तक कृषि के लिऐ बड़े–बड़े घरानों को 1 करोड़ तक का दिया गया ऋण भी प्रत्यक्ष ऋण माना गया था।

हाल ही की नायर समिति और इसके बाद भारतीय रिजर्व बैंक के अप्रैल में जारी परिपत्र के द्वारा प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष वित्त के वर्गीकरण को समाप्त कर दिया गया है। अन्य शब्दों में कहें तो ऐसा करने से कृषि ऋण कहां

जा रहा है, इसका पता लगाना कठिन हो गया है। भारतीय रिजर्व बैंक ने अपने अप्रैल, 2015 में जारी परिपत्र के द्वारा प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष वित्त के अंतर को समाप्त कर दिया है।

इससे पहले कुल 18 प्रतिशत में 13.5 प्रतिशत भाग प्रत्यक्ष वित्त को जाता था और कृषि के लिऐ रेखांकित 18 प्रतिशत के भाग में से 4.5 प्रतिशत तक ही प्रत्यक्ष वित्त को दिया जा सकता था। आज यह अंतर नहीं रहा बल्कि यह उपयोगी होता और पता चलता कि ऋण कहां जा रहा है।

यदि भारतीय रिजर्व बैंक प्रत्यक्ष वित्त की अपनी मूल परिभाषा पर अडिग रहता तो किसानों को 13.5 प्रतिशत ऋण का भाग मिल सकता था। यदि छोटे और मझौले किसानों के लिऐ 8 प्रतिशत भाग देने का लक्ष्य निर्धारित कर दिया जाऐ तो भी बड़े किसानों/कृषि घरानों के लिऐ यह सरल उपाय है कि वह अपने बडे–बडे खेतों को छोटे–छोटे खेतों में बांट दें और इन्हें दो या अधिक छोटे खेतों के टुकड़े में दिखाकर कृषि ऋण लेते रहें और 8 प्रतिशत के भाग में से भी ऋण प्राप्त कर लें। वास्तविक समस्या अब भी वही है कि प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष ऋणों के बीच अंतर किऐ बिना 13.5 प्रतिशत का क्या और कैसे उपयोग होगा और उसे भी कम करके 8 प्रतिशत कर दिया गया है।

जहां तक कि भूमिहिन किसान क्रेडिट कार्ड योजना में भी इसकी संख्या और वितरण से संबंधित कई समस्याऐं हैं। देश भर में केवल 35 लाख किराऐ के किसानों को कार्ड दिया गया है और इसकी संख्या में निश्चित रूप से वृद्धि होनी चाहिऐ, विशेषकर, आंध्र–प्रदेश जैसे राज्यों में, जहां पर अभी भी बहुत बड़ी संख्या में किराऐ के किसान भूमिहीन किसान क्रेडिट कार्ड से वंचित हैं। इस योजना के प्रोत्साहन की राशि भी बहुत कम है। दूसरी तरफ ऋण पात्रता के कार्ड किसानों को तो दे दिऐ गऐ हैं लेकिन बैंक उन्हें ऋण देने से लगातार मना कर रहे हैं। ऐसे किसानों की ओर से भारतीय रिजर्व बैंक को इस मामले में तत्काल हस्तक्षेप करने की आवश्यकता है।

अंत में कृषि ऋण में ही विशिष्ट उद्देश्यों या कार्यों के लिऐ ऋण उपलब्ध कराने को भी नजरअंदाज किया गया है। इसका प्रमुख और जीता जागता उदाहरण पशुपालन क्षेत्र है।

शोक समाचार

भारत कृषक समाज श्री चरणजीत सिंह खनुजा, सुपुत्र श्री मंगत सिंह खनुजा, उपाध्यक्ष, भारत कृषक समाज के 22 नवम्बर, 2015 को अमेरिका में हुए दु:खद निधन पर हार्दिक संवेदना प्रकट करता है। स्वर्गीय श्री चरणजीत सिंह खनुजा, भारत कृषक समाज की गतिविधियों में पूरी उत्सुकता और सक्रिय भाग लेते थे। हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि वह दिवंगत आत्मा को शांति प्रदान करें।